क्या है व्यसन....?

देखो ! यह मनुष्य जन्म, उत्तम कुल, निरोग शरीर, उत्तम धर्म – ये अनंत काल में नहीं पाये थे सो अब इन सबका संयोग एक साथ यहाँ तुम्हें मिल गया है, इसकी एक घड़ी भी कराड़ों के धन में नहीं मिलती है।

ऐसा अवसर सिद्धान्तों का स्वाध्याय, जीवादि द्रव्यों की चर्चा, अनित्यादि बारह भावनाओं, सोलह कारण भावनाओं, पंचपरमेष्ठी की वंदना, जाप, स्मरण आदि करके सफल करने को मिला था; तूने चौपड़, गंजफा, शतरंज, ताश आदि महान् अविद्या में फंसकर समस्त धर्म से, धर्म के मार्ग से पराङ्मुख होकर महापाप कमाकर मर जाने में ही व्यतीत किया। इसके फल में नरक, तिर्यंच आदि में जाकर उत्पन्न होगा।

भगवान के परमागम में तो कहा है कि जिसके सप्त व्यसन का त्याग होगा, वही जिनधर्म के ग्रहण करने का पात्र होगा। जिसके ये सप्त व्यसन ग्रहण हो जाते हैं, उसकी बुद्धि ही विपरीत हो जाती है; वह पाप कार्यों में प्रवीण हो जाता है, अनीति में तत्पर रहता है।

इसलोक का कार्य तो न्यायमार्ग से अपने कुल के योग्य षट्कर्मों द्वारा आजीविका करना तथा खान-पान आदि एवं शरीर को संस्कारित करना, कपड़े व आभूषण आदि पहिनना; न्याय रूप लेना-देना, धरना, जाना, आना, प्रयोजनरूप करना; तथा परलोक के लिये धर्मकार्यों में प्रवर्तन करना ह्न ये दो ही गृहस्थ के करनेयोग्य कार्य हैं। इन दो कार्यों ह्न न्यायरूप आजीविका तथा धर्म रूप प्रवर्तन के सिवाय अन्य जो प्रवृत्ति है, वह व्यसन है।

ह्न रत्नकरंडश्रावकाचार, पृष्ठ-134-135

साधना चैनल पुनः आरंभ

विगत कुछ दिनों से जयपुर के आस-पास राजस्थान में साधना चैनल का प्रसारण नहीं हो पा रहा था; किन्तु अब यह पुनः आरंभ हो गया है। अतः प्रतिदिन रात्रि में 10.20 पर डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के प्रवचनों को सुनना न भूलें।

वीतराग-विज्ञान

वीतराग-विज्ञान ही, तीन लोक में सार।
वीतराग-विज्ञान का, घर-घर होय प्रसार।।

वर्ष : २४ २७१ अंक : ७

प्रवचनसार पद्यानुवाद

ज्ञेयतत्त्वप्रज्ञापन महाधिकार

ज्ञान-ज्ञेयविभाग अधिकार

रागादियुत जब आतमा परिणमे अशुभ-शुभ भाव में।
तब कर्मरज से आवरित हो विविध बंधन में पड़े।।१८७।।
विशुद्धतम परिणाम से शुभतम करम का बंध हो।
संक्लेशतम से अशुभतम अर जघन हो विपरीत से।।१३।।•
सप्रदेशी आतमा रुस-राग-मोह कषाययुत।
हो कर्मरज से लिप्त यह ही बंध है जिनवर कहा।।१८८।।
यह बंध का संक्षेप जिनवरदेव ने यतिवृन्द से।
नियतनय से कहा है व्यवहार इससे अन्य है।।१८९।।
तन-धनादि में 'मैं हूँ यह' अथवा 'ये मेरे हैं' सही।
ममता न छोड़े वह श्रमण उनमार्गी जिनवर कहें।।१९०।।
पर का नहीं ना मेरे पर मैं एक ही ज्ञानातमा।
जो ध्यान में इस भाँति ध्यावे है वही शुद्धातमा।।१९१।।
इसतरह मैं आतमा को ज्ञानमय दर्शनमयी।
ध्रुव अचल अवलंबन रहित इन्द्रियरहित शुध मानता।।१९२।।

• आचार्य जयसेन की टीका में प्राप्त गाथा १३

ह्न डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

आत्मा ही आत्मा का गुरु

पूज्यपाद आचार्य श्री देवनन्दि के प्रसिद्ध ग्रन्थ इष्टोपदेश के ३४ वें श्लोक पर हुए आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के अध्यात्मरसगर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है। मूल श्लोक इसप्रकार है ह्न

स्वस्मिन्सदाभिलाषित्वादभीष्टज्ञापकत्वत: ।
स्वयं हित (तं) प्रयोक्तृत्वादात्मैव गुरुरात्मन: ।।३४।।

आत्मा अपने में सत् (कल्याण या मोक्षसुख) की अभिलाषा करता होने से, अभीष्ट (अपने इच्छित मोक्षसुख के उपाय) को बताता होने से और अपने हित (मोक्षसुख के उपाय) में अपने को जोड़ता होने से आत्मा ही आत्मा का गुरु है।

(गतांक से आगे...)

यहाँ शिष्य प्रश्न करता है कि मोक्षसुख के अनुभव के विषय में गुरु कौन हो सकते है ? उसके उत्तर में आचार्य पूज्यपादस्वामी ने उक्त ३४ वीं गाथा कहीं है।

जो सत् अर्थात् कल्याण का इच्छुक है अथवा जिन्हें अपने कल्याण की इच्छा जागृत हुई है, उन्हें हित का उपाय बतानेवाले अथवा हित के मार्ग की ओर प्रर्वतन करानेवाले ही वास्तविक गुरु है।

जब आत्मा अपने कल्याण का इच्छुक होता है, तब वह कल्याण कैसे हो ह्न उसका उपाय स्वयं, स्वयं को बताते हुए कहता है कि हे भाई ! तू राग से जुदा हो और स्वभाव में एकाग्रता कर ! यही मोक्षसुख का अर्थात् कल्याण की प्राप्ति का उपाय है ह्न इसप्रकार यह आत्मा स्वयं ही स्वयं के हित का रास्ता अपनाकर उसमें ही प्रवर्तन करता है, इसलिये आत्मा ही आत्मा का स्वयं गुरु है।

देव-शास्त्र-गुरु जीव को बार-बार अपना स्वरूप बताते है; किन्तु वह स्वरूप जब तक जीव को अपना प्रतीत नहीं होगा, तब तक उसे आत्मा की प्राप्ति कैसे होगी ? इसलिये आत्मा, आत्मा को समझाते हुये कहता है कि हे आत्मा ! तू आनन्दस्वरूप आत्मा की ही अभिलाषा कर और इस अभिलाषा के उपाय में राग

और विकल्पादिकों से दूर हो, क्योंकि यही शांति-सुख का एकमात्र उपाय है, तब आत्मा अपने को प्राप्त कर सकता है। देव-शास्त्र-गुरु तो इसे बहुत समझाते है; किन्तु यह जीव अपने रागस्वरूप में रहते हुए स्वभाव की प्राप्ति का उपाय ही नहीं करता है तो इसमें देव-शास्त्र-गुरु क्या कर सकते हैं ?

अरहंत देव कहते है कि वीतरागी मार्ग अपनाकर तू दुनिया के साथ नहीं रह सकता । इस मार्ग की जाति ही कोई जुदी है। बापू ! यह मार्ग दुनिया के साथ मेल खाने जैसा नहीं है।

इस जीव को भूतकाल में अनन्तबार साक्षात् तीर्थंकरों का योग बना और भगवान की दिव्यध्वनी में आत्मा के हित का उपाय भी सुनने को मिला; किन्तु अन्तरंग में हित का उपाय आज तक नहीं किया। कल्याण का इच्छुक होकर अपने हित की ओर कभी प्रेरित ही नहीं हुआ तो उसे तीर्थंकर देव भी क्या कर पायेंगे ?

प्रश्न : प्रथम तो अपने कल्याण की बात देव-गुरु के पास समझे तो कल्याण का उपाय करे ?

उत्तर : आप स्वयं अपने कल्याण का रास्ता स्वीकार करें तो देव-गुरु का उपदेश निमित्त कहलायेगा । अपने स्वभाव को समझेगा तभी अपने गुरु की कीं मत समझ में आयेगी। निश्चयपूर्वक गुरु के प्रति भक्ति और विनय का भाव प्रगट होगा। सत्य की समझ के बिना विनय-भक्ति का भी सच्चा व्यवहार नहीं हो सकता है।

हे आत्मा ! भगवान तो ऐसा ही उपदेश देते है; लेकिन तुझे जचंता नहीं है। हे भाई ! तू इस तत्त्व को अपने अन्दर में ग्रहण कर। राग से जुदा तेरे तत्त्व का अभ्यास कर ! अभ्यास करके उसमें ठहरना यहीं तेरा कार्य है, क्योंकि अन्य कोई भी तेरा यह कार्य नहीं कर सकता है।

लोक में कहावत है कि ' जन्मान्ध को दीपक क्या करें ?' उसीप्रकार शिष्य स्वयं तैयार न हो तो गुरु उसमें क्या करें ? इसलिये यहाँ कहते है कि तू स्वयं स्वयं का गुरु हो, तो तेरा हित होगा और तब ही तुझे गुरु के विनय-भक्ति का व्यवहार आयेगा। निश्चयभक्ति प्रगट हो तो व्यवहार आता है। यह बात यहाँ सिद्ध होती है।

परपदार्थ और रागादि से भिन्न होकर स्वाभाविक सुख प्रगट करने की जिसे इच्छा हो, उसकी यहाँ बात चल रही है। जिसको अभी भी पुण्य और पुण्य से प्राप्त संयोगों

में से सुख प्राप्ति की इच्छा हो, उसकी यहाँ बात नहीं है; किन्तु जिसे 'काम एक आत्मार्थ का, दूजा नहीं मनरोग' ऐसी अभिलाषा है ह्न उसे ही सच्ची अभिलाषा है और वही हित का सच्चा उपाय कर सकता है।

अहो ! शाश्वत सत्-सुख की आकांक्षा करनेवाला आत्मा स्वयं है और उसके उपायरूप सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र का स्वरूप बतानेवाला भी स्वयं ही है। जनानेवाला और जाननेवाला भी स्वयं है। इसीप्रकार अपने हित का इच्छुक भी स्वयं ही है। हित का उपाय बतानेवाला और हितरूप प्रवर्तन करनेवाला भी स्वयं है, इसलिये वास्तव में आत्मा ही अपने आप का गुरु भी है और शिष्य भी है।

कोई साधु, ब्रम्हचारी, पण्डित आदि नाम धारण करे और उसके पीछे मान-प्रतिष्ठा की भावना हो तो उसके अन्तर में राग की अग्नि ही जलती रहती है, उसे वास्तव में सच्चे सुख की इच्छा ही नहीं है, मानादि की ही इच्छा है। यह जीव अनादि से यही करते आया है और यही कर रहा है। इसमें नया क्या किया ?

आत्मा आप स्वयं पूर्णानन्द का नाथ है। उसमें से ही मोक्ष प्रगट होता है, बाकी 'तारे तो तिरे' यह बात झूठी है तथा 'तिरे तो तारे' ह्न यह भी निमित्त का कथन है। पात्र जीव हो और अपने पुरुषार्थ से तरे तो उसे देव-शास्त्र-गुरु निमित्त कहने में आते है।

पात्र जीव को तो एक ही अभिलाषा होती है कि मुझे तो एक सत् की ही इच्छा है, शाश्वत मोक्ष की ही कामना है। बाकी संयोग-विकारादि असार है। वे कोई मेरे अपने नहीं हैं। जगत की कीर्ति-ख्याति मेरे लिये नहीं है। इसप्रकार जिसे एकमात्र सत् की ही इच्छा है ह्न उससे कहते है कि सत्प्राप्ति का उपाय भी तेरा तुझमें ही है।

भाई ! तू बाहर की समस्त अभिलाषाएँ छोडकर शाश्वत सुखरूप पर से मुक्त और स्व से परिपूर्ण ऐसे मोक्ष की अभिलाषा कर ! उसका उपाय जान और उसमें ही प्रवर्तन कर ह्न ऐसी अभिलाषा करनेवाला और उसका उपाय शोधनेवाला तथा उसमें ही प्रवर्तन करनेवाला ह्न ऐसा तू स्वयं ही अपने आप का गुरु है।

प्रश्न : पारसमणि लोहे को स्वर्ण बना देता है, लेकिन पारसमणि तो नहीं, परंतु आप हमें अपने समान तो बना ही लेते हो ?

उत्तर : पारसमणि भी जंग लगे हुये लोहे को स्वर्ण नहीं बना सकता। अच्छा लोहा हो तो ही स्वर्ण बना सकता है; उसीप्रकार पात्र जीव हो तो ही वह अपने स्वयं

का गुरु बन सकता है; किन्तु अपात्र जीव अपने स्वयं का गुरु नहीं बन सकता; इसलिये जीव की अपनी पात्रता मुख्य है।

जाननपना विशेष हो अथवा न हो, बोलना आवे अथवा न आवे ह्न यह सब बात एक तरफ रखकर यहाँ तो जिसे एकमात्र मोक्ष की इच्छा है, जो मोक्ष का ही उपाय खोज रहा हो और उसमें ही प्रवर्तन करता हो, उसे ही गुरु कहा गया है।

मोक्ष अर्थात् पर से और राग से रहित आत्मा की परमानन्दस्वरूप दशा की ही जिसे अभिलाषा है, वह मोक्ष का उपाय जानने का प्रयत्न करता है और उसे जानकर स्वयं चिंतवन करता है कि स्वरूप में रहना और बाह्य परपदार्थों से हटना ही एकमात्र मोक्ष का उपाय है ह्न ऐसा जानकर उसमें ही जो प्रवर्तन करता है वह स्वयं ही स्वयं का गुरु कहलाता है तथा जो निश्चय गुरु स्वयं होता है, उसे ही व्यवहार गुरु का बहुमान-विनय और भक्ति-भाव आता है।

जीव को सत् की अभिलाषा जागृत होती है, तब उसे कोई रोक नहीं सकता और जब संसार की अभिलाषा जागृत हो, तब उसे कोई गुरु मोक्ष की इच्छा जगा नहीं सकते, इसलिये वास्तव में तो आत्मा का गुरु आत्मा स्वयं ही है।

संसार का वैभव, इज्जत, कीर्ति, पुण्य इत्यादि में सुख नहीं हैं, फिर भी अज्ञानी जीव उनमें सुख मानकर अभिलाषा करे तो उसे कौन रोक सकता है ? जहाँ स्वयं को ही अन्तर से सत्सुख की अभिलाषा जागृत न हो तब गुरु भी उसे क्या कर सकते है ?

सत्सुख की अभिलाषा अर्थात् आत्मा के पूर्ण आनन्दरूप मोक्ष की अभिलाषा। मोक्ष एक ही सुखरूप है, उसके अलावा चार गति, कीर्ति-वैभव आदि सब दुःखरूप हैं और दुःख का कारण हैं।

समस्त परद्रव्य और रागादि से छूटकर जीव का अपनी सम्पूर्ण आनन्दरूप दशा को प्राप्त कर लेने का नाम मोक्ष है। यही वास्तविक सुख है ह्न ऐसे सत्सुख की अभिलाषा करनेवाला आत्मा स्वयं है, इसलिये आत्मा स्वयं ही स्वयं का गुरु है।

(क्रमशः)

कार्यस्वभावज्ञान और कारणस्वभावज्ञान

परमपूज्य सर्वश्रेष्ठ दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द के प्रसिद्ध परमागम नियमसार की 11-12 वीं गाथा पर हुए आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के अध्यात्मरसगर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है।

गाथा मूलतः इसप्रकार है -

केवलमिंदियरहियं असहायं तं सहावणाणं ति ।
सण्णाणिदरवियप्पे विहावणाणं हवे दुविहं ।।11।।
सण्णाणं चउभेयं मदिसुदओही तहेव मणपज्जं ।
अण्णाणं तिवियप्पं मदियाई भेददो चेव ।।12।।

इन्द्रियरहित और असहाय होने से केवलज्ञान स्वभावज्ञान है। विभावज्ञान ह्न सम्यग्ज्ञान और मिथ्याज्ञान के भेद से दो प्रकार का है।

मति, श्रुत, अवधि तथा मनःपर्यय सम्यग्ज्ञानरूप है तथा कुमति, कुश्रुत और कुअवधि मिथ्याज्ञानरूप हैं।

(गतांक से आगे...)

साधर्मी जीव को आत्मभान सहित जो सम्यग्ज्ञान प्रकट हुआ, उसके मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय चार भेद हैं।

(1) मतिज्ञान अनेक भेदवाला है। उपलब्धि, भावना तथा उपयोग के भेद से मतिज्ञान तीन प्रकार का है। मतिज्ञानावरण का क्षयोपशम जिसमें निमित्त है, वह अर्थग्रहण शक्ति (पदार्थ को जानने की शक्ति) **उपलब्धि** है। जाने हुये पदार्थ का पुनः-पुनः चिंतन **भावना** है। 'यह पीला है' 'यह काला है', इत्यादिरूप से अर्थग्रहण व्यापार (पदार्थ को जानने का व्यापार) **उपयोग** है। मतिज्ञान चार भेदवाला भी है ह्न अवग्रह, ईहा, अवाय और धारणा। मतिज्ञान के बारह भेद भी किये गये हैं ह्न बहु, एक, बहुविध, एकविध, क्षिप्र, अक्षिप्र, अनिःसृत, निःसृत, अनुक्त, उक्त, ध्रुव और अध्रुव।

(2) लब्धि और भावना के भेद से श्रुतज्ञान दो प्रकार का है। श्रुतज्ञान के उपयोग

को यहाँ भावना में समाविष्ट कर दिया है।

(3) देश, सर्व और परम के भेद से अर्थात् देशावधि, सर्वावधि और परमावधि के भेद से अवधिज्ञान तीन प्रकार का है। अन्दर में उपयोग लगाने पर स्वर्ग-नरक को जान लेना इस ज्ञान का सामर्थ्य है।

(4) ऋजुमति और विपुलमति के भेद से मन:पर्यय ज्ञान दो प्रकार का है। यह ज्ञान मुनि के ही होता है, वह भी सबको नहीं; किन्तु किसी-किसी महामुनि को ही होता है।

सुमतिज्ञान और सुश्रुत ज्ञान सर्व सम्यग्दृष्टि जीवों के होते हैं, सुअवधिज्ञान किसी-किसी सम्यग्दृष्टि को होता है तथा मन:पर्यय ज्ञान किन्हीं-किन्हीं महामुनिवरों को/ विशेष संयमधरों को होता है।

परमभाव में स्थित सम्यग्दृष्टियों को ही ये चार सम्यग्ज्ञान हो सकते हैं।

देखो ! यहाँ यह बताया है कि भले ही अवधि या मन:पर्ययज्ञान हो अथवा चौथा, पाँचवा, छठवा ह्न इनमें से कोई भी गुणस्थान हो; किन्तु जब परमभाव में स्थित होवे, तभी वह धर्मी है और उसी को ऐसा सम्यग्ज्ञान होता है।

परमभाव का अर्थ क्या ? शरीरादि तो पर हैं ही, पुण्य-पाप विकार हैं और पर्याय भी क्षणिकभाव है, वह कहीं परमभाव नहीं है। त्रिकाल एकस्वरूप परमपारिणामिक स्वभाववाले आत्मा को यहाँ परमभाव कहा है। सम्यग्दृष्टि जीव उसी की भावना में स्थित होते हैं। किसी निमित्त, संयोग अथवा विकार की भावना करनेवाला सम्यग्दृष्टि नहीं है। इनकी भावना से सम्यग्ज्ञान भी नहीं होता । अपने कारणसमयसारस्वभाव की भावना करने से ही सम्यग्ज्ञान होता है।

त्रिकाली कारणस्वभावज्ञान सहित सम्पूर्ण आत्मा परमभाव है। उसकी भावना में स्थित जीव को सम्यग्ज्ञान होता है। छठवें-सातवें गुणस्थान में झूलते भावलिंगी संत हों अथवा राज्य भोगता चक्रवर्ती गृहस्थ हो ह्न इन दोनों को ऐसे परमभाव की ही भावना होती है। बाहर के क्रिया-काण्ड से गुणस्थान का माप नहीं है, अपितु परमभाव में जिस अंश में स्थिति है, उस अंश में ही गुणस्थान होता है। जिसको ऐसे परमभाव का ज्ञान नहीं है, उस मिथ्यादृष्टि के

ज्ञान को कुमति, कुश्रुत और विभंग कहते हैं।

अब ज्ञानोपयोग के भेदों में से कौनसे प्रत्यक्ष और परोक्ष हैं यह बताते हैं।

सहजज्ञान शुद्धअन्त:तत्त्वरूप परमतत्त्व में व्यापक होने से स्वरूप प्रत्यक्ष है। आत्मा का जो त्रिकाल परमस्वभावभाव है, वह शुद्धअंत:तत्त्वरूप परमतत्त्व है, उसमें कारणस्वभावज्ञान व्यापक है, इसलिये वह ज्ञान स्वरूपप्रत्यक्ष है। कारणस्वभावज्ञान ही सहजज्ञान है और उसी को स्वरूपप्रत्यक्षज्ञान कहते हैं।

स्वरूपप्रत्यक्षज्ञान त्रिकाल है, वह उत्पाद-व्ययरूप पर्याय में रहनेवाला नहीं है; अपितु त्रिकालशुद्ध परमपारिणामिकभावरूप परमतत्त्व में ही वह ज्ञान व्याप्त है; अत: आत्मा के साथ त्रिकाल वर्तता है। इस स्वरूपप्रत्यक्षज्ञान का कभी विरह नहीं है, तीनों काल वह प्रत्यक्ष ही है; अत: वह स्वरूपप्रत्यक्षज्ञान त्रिकाल है। उसमें समूचे आत्मा को युगपद जानने का त्रिकाल सामर्थ्य है। केवलज्ञान तो नया होता है, वर्तमान में उसका विरह है; अत: वह स्वरूपप्रत्यक्ष नहीं है। वह प्रकट होने के बाद सम्पूर्ण प्रत्यक्ष है; किन्तु स्वरूपप्रत्यक्ष नहीं है; जबकि यह सहज ज्ञान तो त्रिकाल स्वरूपप्रत्यक्ष है। तीनों काल उसमें पूर्ण जानने का सामर्थ्य पड़ा ही हैह्न ऐसा स्वभाव ही सम्यग्दर्शन का विषय है।

त्रिकाल रहनेवाले ज्ञान-दर्शन गुण की यह बात नहीं है; अपितु जैसा गुण है, वैसा ही उसका विशेष-विशेष वर्तमान सदा वर्तता ही रहता है। यदि उसका एकरूप रहनेवाला विशेष न हो तो ज्ञान-दर्शन का परमपारिणामिक भाव सिद्ध न हो। जैसे धर्मास्तिकाय आदि की पर्याय एकरूप त्रिकाल है, वैसे ही आत्मा के ज्ञान-दर्शन में एकरूपकारणस्वभाव ज्ञानोपयोग त्रिकाल वर्तता है।

यहाँ उपयोग की बात होने से ज्ञान और दर्शन इन दो गुणों के त्रिकाली कारण-स्वभावज्ञानोपयोग की बात ली है। आगे समूचे द्रव्य की कारणशुद्धपर्याय की बात आयेगी, उसमें तो सभी गुणों की एकरूप कारणशुद्धपर्याय की बात आयेगी। ऐसा सामान्य-विशेष से परिपूर्ण आत्मा सम्यग्दर्शन का विषय है। अहो ! यह शास्त्र भी अलौकिक और उसके भावों का स्पष्टीकरण भी अलौकिक है।

आत्मा के उपयोग का वर्णन चल रहा है। चैतन्य अनुविधायी परिणाम को

उपयोग कहते हैं। उसके प्रकारों का यह वर्णन चल रहा है। (1) कारणस्वभावज्ञान (2) कार्यस्वभावज्ञान (3-5) कुमति-कुश्रुत और विभंग यह 3 अज्ञान (6-9) सम्यक्मति-श्रुत-अवधि और मन:पर्यय यह चार ज्ञान ह्न इसप्रकार कुल नौ भेद हुये।

इनमें प्रत्यक्ष और परोक्ष के प्रकार बतलाते हैं। कारणस्वभावज्ञानोपयोग तो सहजप्रत्यक्ष है अथवा त्रिकालशक्तिरूप स्वरूपप्रत्यक्ष है और केवलज्ञान सकल प्रत्यक्ष है। **रूपिष्ववधे:** अर्थात् अवधिज्ञान का विषय सम्बन्ध रूपी द्रव्यों से है ह्न ऐसा आगम वचन होने से अवधिज्ञान विकल प्रत्यक्ष (एकदेशप्रत्यक्ष) है। उसके अनन्तवें भाग वस्तु के अंश का ग्राहक (जाननेवाला) होने से मन:पर्ययज्ञान भी विकलप्रत्यक्ष है। मतिज्ञान और श्रुतज्ञान दोनों ही परमार्थ से परोक्ष और व्यवहार से प्रत्यक्ष हैं।

यहाँ पर-विषय की अपेक्षा से मति-श्रुत को परोक्ष माना है; किन्तु स्व-विषय की अपेक्षा से तो ये भी प्रत्यक्ष ही हैं और पर-विषयों को इन्द्रियों द्वारा प्रत्यक्ष जानते हैं। इस अपेक्षा से इन दोनों को व्यवहारप्रत्यक्ष भी कहा गया है।

यहाँ उपर्युक्त ज्ञानों में साक्षात् मोक्ष का मूल निजपरमतत्त्व में स्थित एक सहजज्ञान ही है; इसके अतिरिक्त अन्य कोई भी मोक्ष का परमार्थ कारण नहीं है। मति-श्रुतादि को परम्परा मोक्ष का कारण कहा जाता है; पर जो त्रिकालीकारणस्वभावज्ञान है, वही मोक्ष का मूल है। चार ज्ञानों को मोक्ष का कारण नहीं कहा और केवलज्ञान तो मोक्षस्वरूप ही है, उसका कारण भी त्रिकालीसहजज्ञान है। वह सहजज्ञान पारिणामिक भावरूपस्वभाव के कारण भव्यजीवों को परमस्वभाव है। यद्यपि अभव्य को भी वैसा सहजज्ञान त्रिकाल है, किन्तु उसे उसका भान न होने से वह परमस्वभाव की गणना में नहीं आता। भव्यजीव का परमस्वभाव त्रिकालीसहजएकरूपज्ञान है और यही आदरणीय है; क्योंकि इसी के आश्रय से केवलज्ञान प्रकट होता है। त्रिकाल स्वरूपप्रत्यक्षज्ञान के आधार से ही सम्यक् मति-श्रुत-अवधि-मन:पर्यय तथा केवलज्ञान होते हैं। किसी पर के आश्रय से ज्ञान विकसित नहीं होता। ऐसे सहजज्ञान को उपादेय करना ही मोक्ष का कारण है। **(क्रमश:)**

ज्ञान गोष्ठी

सायंकालीन तत्त्वचर्चा के समय विभिन्न मुमुक्षुओं द्वारा
पूज्य स्वामीजी से पूछे गये प्रश्न और स्वामीजी द्वारा दिये गये उत्तर

प्रश्न : जीव अजीव के कार्य भले ही न कर सके, किन्तु अपने परिणाम तो चाहे जैसे कर सकता है या नहीं ?

उत्तर : जीव अपने परिणाम भी चाहे जैसी इच्छानुसार नहीं कर सकता; किन्तु जो परिणाम जैसा होना है, वही होता है, आगे पीछे मनचाहा नहीं हो सकता। जगत में सबकुछ व्यवस्थित, क्रमसर होता है, कहीं कुछ फेरफार संभव नहीं है।

उतावला पुरुष फेर-फार करना तो बहुत चाहता है; परन्तु कुछ भी फेर-फार नहीं कर सकता। इन सब बातों का सार यही है कि हे भाई ! तू ध्रुवस्वभाव पर दृष्टि दे।

प्रश्न : क्या पर्याय का कारण स्व-द्रव्य भी नहीं है ?

उत्तर : परद्रव्य से तो अपनी पर्याय होती ही नहीं; अपितु अपने द्रव्य से पर्याय हुई ह्न ऐसा कहना भी व्यवहार है। वास्तव में तो पर्याय, पर्याय की अर्थात् अपनी ही योग्यता से स्वकाल में होती है ह्न यह निश्चय है। सम्यग्दर्शन की पर्याय का उत्पाद हुआ; इसलिये मिथ्यात्वकर्म का नाश हुआ, ऐसा तो है ही नहीं; किन्तु वर्तमान पर्याय में सम्यक्त्व का उत्पाद हुआ, इसकारण पूर्वपर्याय के मिथ्यात्वभाव का व्यय हुआ ह्न ऐसा भी नहीं है। सम्यग्दर्शन की पर्याय का उत्पाद स्वतंत्र हुआ है और मिथ्यात्वभाव की पर्याय का व्यय भी स्वतंत्र हुआ है।

केवलज्ञान पर्याय का उत्पाद हुआ, वह केवलज्ञानावरणी कर्म के अभाव से हुआ ह्न ऐसा तो है ही नहीं; किन्तु अपने द्रव्य के कारण से केवलज्ञान पर्याय का उत्पाद हुआह्न ऐसा भी नहीं है। पर्याय का पर्याय के षट्कारक से स्वतंत्र उत्पाद हुआ है। यहाँ तो पर्याय का दाता द्रव्य नहीं है ह्न ऐसा कहना है। पर्याय का लक्ष द्रव्य के ऊपर जाता है, वह उस पर्याय की स्वयं की सामर्थ्य से ही जाता है; द्रव्य के कारण से नहीं। सम्यग्दर्शन की पर्याय का लक्ष द्रव्य के ऊपर जाता है, वह उस पर्याय का ही सामर्थ्य है। यही द्वादशांग का दोहन है।

वास्तव में तो पर्याय, पर्याय के स्वकाल में, जन्मक्षण में जो होनी हो, वही होती है। द्रव्य से पर्याय होती है ह्न ऐसा कथन भी व्यवहार है। उत्पादरूप पर्याय का द्रव्य

कारण नहीं है और व्यय भी कारण नहीं है। यह उत्पाद पर्याय का निश्चय है। सम्यग्दर्शन पर्याय द्रव्य के आश्रय से होती है ह्न ऐसा कहना भी अपेक्षित कथन है। सम्यग्दर्शन पर्याय होती है, वह उसका जन्मक्षण है; किन्तु उस पर्याय का लक्ष्य द्रव्य के ऊपर है; इसलिये द्रव्य के आश्रय से सम्यग्दर्शन होता है ह्न ऐसा कहा जाता है।

वास्तव में तो सम्यग्दर्शन पर्याय का, पर से भिन्न पड़ने का, भेदज्ञान पर्याय होने का स्वकाल है, जन्मक्षण है। तभी वह पर्याय होती है; परन्तु वह किसको होती है ? जिसका लक्ष द्रव्यस्वभाव के ऊपर होता है, उसी को होती है। पर्याय में खड़े-खड़े पर्याय के सन्मुख देखनेवाले को पर्याय के स्वकाल का सच्चा ज्ञान नहीं होता। जैनदर्शन का यही परमसत्य स्वरूप है।

प्रश्न : परमाणु में रंगगुण त्रिकाली है, उसकी पर्याय प्रथम समय में काली हो, वह बदलकर द्वितीय समय में लाल, सफेद अथवा पीली हो जाये तो उसका कारण कौन है ? यदि रंग गुण कारण हो तो वह तो स्थायी रहता है, फिर परिणमन में विचित्रता कैसे ?

उत्तर : वास्तव में तो उस परमाणु में उस समय की पर्याय अपने षट्कारक से स्वतंत्र परिणमती है, उसमें उसका रंगगुण कारण नहीं है। इसीप्रकार प्रत्येक द्रव्य की पर्याय अपने-अपने स्वकाल में स्वतंत्र परिणमन करती है। अहा ! पर्याय की स्वतंत्रता की बात बहुत सूक्ष्म है।

प्रश्न : अनादि से चली आ रही सबसे बड़ी मूर्खता है ?

उत्तर : जिसका करना अशक्य हो, उसे करने की बुद्धि होना ही मूर्खता है। देहादि के कार्य मैं कर सकता हूँ, हस्त-पादादि को मैं हिला-डुला सकता हूँ, परद्रव्य के कार्य मैं कर सकता हूँ ह्न यह समस्त विचार शृंखला अबुद्धिमत्तापूर्ण है।

मैं पर जीवों को सुखी अथवा दुःखी कर सकता हूँ, मार या बचा सकता हूँ, देश-कुटुम्ब आदि की सेवा कर सकता हूँ ह्न ऐसी बुद्धि होना ही मूर्खता पूर्ण है।

परद्रव्य की कोई भी क्रिया-परिणति उसके अपने ही आधीन है, अन्य द्रव्य के द्वारा उसका किया जाना अशक्य है; तथापि उसका कर्तृत्व की बुद्धि होना मिथ्यात्वभाव की मूर्खता है तथा जो कार्य अपने द्वारा ही किया जा सकता है ह्न ऐसे अपने स्वरूप की सच्ची श्रद्धा, सच्चा ज्ञान, सच्चा आचरण यह जीव नहीं करता है ह्न यह उसकी दूसरी बड़ी मूर्खता है।

पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव सानन्द सम्पन्न

कोलकाता (प. बं.) : शाश्वत सिद्धक्षेत्र सम्मेदशिखरजी के निकट सोनार बांग्ला नाम से प्रसिद्ध पश्चिम बंगाल की ऐतिहासिक एवं औद्यौगिक महानगरी कोलकाता के भवानीपुर-पद्दोपुकुर क्षेत्र में सम्पूर्ण पूर्वांचल के मुमुक्षु समाज द्वारा सर्वप्रथम नवनिर्मित श्री महावीरस्वामी जैन मन्दिर हेतु श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन स्वाध्याय मन्दिर ट्रस्ट के तत्त्वावधान में दिनांक 26 दिसम्बर 05 से 1 जनवरी 06 तक श्री महावीर दिगम्बर जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव का आयोजन अनेक मांगलिक कार्यक्रमों पूर्वक सानन्द सम्पन्न हुआ।

महोत्सव में गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के सी. डी. प्रवचनों के अतिरिक्त विद्यावारिधि डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव पर प्रासंगिक प्रवचन हुये।

आपके अतिरिक्त पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, पण्डित वीरेन्द्रकुमारजी आगरा, पण्डित अशोककुमारजी लुहाड़िया आदि विद्वानों के प्रवचनों का लाभ समाज को प्राप्त हुआ।

पंचकल्याणक की सम्पूर्ण प्रतिष्ठा-विधि बाल ब्र. पण्डित जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद के प्रतिष्ठाचार्यत्व एवं निर्देशन में सहयोगी बाल ब्र. धन्यकुमारजी बेलोकर गजपंथ, पण्डित मधुकरजी जैन जलगाँव, पण्डित धनसिंहजी पिडावा, पण्डित राजकुमारजी शास्त्री बांसवाड़ा, पण्डित ऋषभकुमारजी छिंदवाड़ा, पण्डित अजितजी शास्त्री अलवर, पण्डित सुबोधजी शाहगढ़, पण्डित मनीषजी पिड़ावा, पण्डित संदीपजी बड़ामलहरा, पण्डित अशोकजी शास्त्री रायपुर, पण्डित आशीषजी टीकमगढ़, पण्डित गजेन्द्रजी बड़ामलहरा आदि विद्वानों ने सम्पन्न कराये।

जिनमंदिर में प्रथम तल पर विशाल स्वाध्याय भवन एवं भूतल पर वीतराग-विज्ञान पाठशाला का उद्घाटन किया गया। द्वितीय तल पर आकर्षक जिनमंदिर में भगवान सीमंधरस्वामी, भगवान आदिनाथस्वामी एवं भगवान महावीरस्वामी की मनोज्ञ प्रतिमायें तथा भव्य शिखर के कक्ष में विद्यमान बीस तीर्थंकर जिनालय व खड्गासन त्रिमूर्ति जिनमंदिर में भगवान आदिनाथस्वामी, भगवान भरतस्वामी एवं भगवान बाहुबलीस्वामी की वीतरागी भाववाही प्रतिमायें प्रतिष्ठा विधि पूर्वक विराजमान की गईं। साथ ही पंचपरमागम एवं चार अनुयोगमय रत्नजड़ित जिनवाणी, छत पर छतरीनुमा वेदी में आचार्य कुन्दकुन्द देव, आचार्य अमृतचन्द्रस्वामी आदि आठ पूर्वाचार्यों के चरण विराजमान किये गये।

सांस्कृतिक कार्यक्रमों में मंगलायतन के विद्यार्थियों द्वारा प्रस्तुत भगवान बाहुबली नाटक एवं मण्डलेश्वर मण्डल की ओर से चन्दनबाला नाटिका विशेष आकर्षण का केन्द्र रहे।

पंचकल्याणक में अ.भा. जैन युवा फैडरेशन मेरठ के 150 सदस्य, श्री टोडरमल दि. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय जयपुर तथा आचार्य अकलंक शिक्षण संस्थान बांसवाड़ा के छात्रों का सराहनीय योगदान रहा। ●

अखिल भारतीय विद्वत्सम्मेलन सम्पन्न

श्रवणबेलगोला (कर्नाटक) : यहाँ महामस्तकाभिषेक की पूर्व बेला में गोम्मटेश्वर भगवान श्री बाहूबलीस्वामी महामस्तकाभिषेक महोत्सव समिति 2006 द्वारा आयोजित दिनांक 28 दिसम्बर से 1 जनवरी, 06 तक श्री क्षेत्र श्रवणबेलगोला में शताधिक विद्वानों की उपस्थिति में विद्वत् सम्मेलन सानन्द सम्पन्न हुआ।

प्रतिदिन 3 सत्रों में विभिन्न विद्वानों द्वारा आगम, अध्यात्म, भाषा, शिल्प, कला, संस्कृति संबंधी विभिन्न विषयों पर सारभूत विवेचना प्रस्तुत की गई। समागत विद्वानों में डॉ. वाचस्पति उपाध्याय दिल्ली, डॉ. रंजनसूरिदेव, डॉ.राजाराम जैन, डॉ. प्रेमसुमन जैन उदयपुर, अध्यात्मरत्नाकर पण्डित रतनचन्द भारिल्ल जयपुर, श्री नीरज जैन सतना, डॉ. रमेशचन्द जैन बिजनौर, डॉ. कुलभूषण लोखण्डे, डॉ. नलिन के. शास्त्री, प्रो. हम्पानागराजैया, श्री महावीरराज गेलडा आदि लगभग 130 से अधिक विद्वान देश के कोने-कोने से पधारे। जैनसमाज के विद्वानों की चारों शीर्षस्थ संस्थाओं के पदाधिकारी व प्रतिनिधियों की उपस्थिति से सम्मेलन गौरवान्वित हुआ है।

पं. टोडरमल स्मारक ट्रस्ट से जुड़े विद्वानों में पण्डित रतनचन्द भारिल्ल, डॉ. राजेन्द्र बंसल, डॉ. सुदीप जैन, डॉ. अशोक गोयल, पं. शांतिकुमार पाटील, पं. जम्बूकुमार शास्त्री, डॉ. अनेकान्त जैन, पं. शांतिसागर शास्त्री, पं. नाभिराजन शास्त्री तथा श्री अखिल बंसल मुख्य थे।

दिन में सम्पन्न हुये सभी सत्रों में आचार्य वर्धमानसागरजी, आचार्य पद्मनन्दीजी, आचार्य तपसागरजी, आचार्य कुमुदनन्दीजी, आचार्य वरदत्तसागरजी, आचार्य कुशाग्रनन्दीजी, आचार्य गुणनन्दीजी, उपाध्याय कामकुमारनंदीजी आदि की ससंघ उपस्थिति व प्रासंगिक उद्बोधन तथा भट्टारक श्री चारुकीर्तिजी-श्रवणबेलगोला की उपस्थिति व मार्गदर्शन प्राप्त हुआ।

इस विभिन्न विचारधारावाले विद्वत् सम्मेलन से जो जैन विद्वानों में एकता का वातावरण बना वह इस सम्मेलन की विशेष उपलब्धि थी। अन्त में दिनांक 2 से 5 जनवरी तक समागत सभी विद्वानों को उनकी इच्छानुसार कर्नाटक/तमिलनाडू के प्रमुख तीर्थों की सामूहिक यात्रा श्री क्षेत्र श्रवणबेलगोला की ओर से कराई गई।

ज्ञातव्य है कि **डॉ.हुकमचन्दजी भारिल्ल** भी 11 से 19 फरवरी, 2006 तक श्रीक्षेत्र श्रवणबेलगोला में उपस्थित रहेंगे। ●

हार्दिक बधाई !

साहित्यकार स्व. यशपाल जैन की स्मृति में आयोजित अखिल भारतीय निबन्ध प्रतियोगिता में टोडरमल दि. जैन सि.महाविद्यालय के छात्र कमलेश जैन को द्वितीय पुरस्कार स्वरूप 2000/-रुपये प्रदान किये गये। प्रथम पुरस्कार (3000/-रुपये) कु. आरती जैन, ग्वालियर को तथा तृतीय पुरस्कार (1000/-रुपये) कु.नंदिनी जैन खड्गपुर-प.बंगाल को प्रदान किया गया।

निबन्ध का विषय **भारतीय परम्पराओं और जीवन मूल्यों की रक्षा कैसे हो** रखा गया था।

संजीव गोधा को आ.समन्तभद्र पुरस्कार

जयपुर (राज.) : यहाँ दि. जैन तेरहपंथी बड़ा मंदिर में रविवार, दिनांक 8 जनवरी, 2006 को दिगम्बर जैन महासमिति, जयपुर (पूर्व संभाग) द्वारा डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल की प्रेरणा से प्रतिवर्ष जैन दर्शन एवं विद्या के क्षेत्र में कार्यरत एक युवा विद्वान को सम्मानित करने का निर्णय लिया गया। इसी शृंखला की प्रथम कड़ी के रूप में **पण्डित संजीवकुमारजी गोधा, जयपुर** को

जैनदर्शन एवं वीतरागी तत्त्वज्ञान के प्रचार-प्रसार में उनके उत्कृष्ट योगदान को ध्यान में रखते हुये **आचार्य समन्तभद्र पुरस्कार** से सम्मानित किया गया; जिसके अन्तर्गत उन्हें प्रशस्ति-पत्र, 11 हजार रुपये की नगद राशी एवं श्री फल भेंटकर सम्मानित किया गया।

इस अवसर पर आयोजित सभा के अध्यक्ष अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल ने वर्तमान समय में युवा विद्वानों को प्रोत्साहन की बात पर विशेष बल दिया। मुख्य अतिथि के रूप में महासमिति के राष्ट्रीय कार्याध्यक्ष श्री महेन्द्रकुमारजी पाटनी, भारत जैन महामण्डल के कार्याध्यक्ष श्री राजकुमारजी काला तथा वयोवृद्ध विद्वान पण्डित ज्ञानचन्दजी बिलटीवाला मंचासीन थे।

सम्माननीय विद्वान का परिचय पण्डित पीयूषजी शास्त्री ने दिया। पुरस्कार भेंटकर्त्ता डॉ. एस.बी.पापड़ीवाल थे। इस अवसर पर मंदिर का परिचय देते हुये श्री विनयजी पापड़ीवाल ने यहाँ पण्डित टोडरमलजी से चल रही 250 वर्षों की शास्त्र प्रवचन परम्परा का उल्लेख किया। महासमिति का परिचय श्री महेन्द्रजी पाटनी ने दिया। कार्यक्रम का संचालन श्री मणीभद्रजी जैन ने किया।

ज्ञातव्य है कि पण्डित संजीवकुमारजी गोधा वर्तमान में वीतराग-विज्ञान (मासिक) एवं जैनपथप्रदर्शक (पाक्षिक) के प्रबन्ध सम्पादक तथा श्री टोडरमल दि. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के वरिष्ठ अध्यापक हैं साथ ही श्री तेरहपंथियान बड़ा मंदिर में विगत 15 वर्षों से नियमित स्वाध्याय सभा चला रहे हैं। जयपुर में अन्य भी अनेक स्थानों पर धार्मिक गतिविधियाँ संचालित करने में आपका महत्त्वपूर्ण योगदान रहता हैं।

ह्न प्रद्युम्न पाटनी

डॉ. भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

04 से 10 फरवरी, 2006	**कोटा**	**पंचकल्याणक**
11 से 19 फरवरी, 2006	**श्रवणबेलगोला**	**महामस्तकाभिषेक**
09 से 26 मई, 2006	**देवलाली**	**प्रशिक्षण-शिविर**
26 मई से 16 जुलाई, 06	**विदेश**	**धर्मप्रचारार्थ**
23 जुलाई से 1 अगस्त,06	**जयपुर**	**शिक्षण-शिविर**
04 से 09 अगस्त, 2006	**लंदन**	**पंचकल्याणक**

अमृत-महोत्सव सानन्द सम्पन्न

मनोहरलाल काला

इन्दौर (म.प्र.) : यहाँ साधनानगर स्थित जिनमंदिर में श्री मनोहरलालजी काला के 75 वाँ जन्मोत्सव **अमृत-महोत्सव** के रूप में मनाया गया। इस अवसर पर दिनांक 14 से 18 दिसम्बर, 05 तक एक सौ सत्तर तीर्थंकर मण्डल विधान एवं शिविर का आयोजन किया गया।

विधि-विधान के समस्त कार्य ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री, सनावद के निर्देशन में पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, पण्डित सुबोधजी शास्त्री शाहगढ़ एवं पण्डित सुनीलजी 'धवल' भोपाल ने सम्पन्न कराये।

पंचदिवसीय इस अमृत महोत्सव में पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल जयपुर, पण्डित राजेन्द्रकुमारजी जबलपुर, पण्डित पूनमचन्दजी छाबडा इन्दौर, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली एवं पण्डित सुशीलजी राघौगढ़ आदि ने अपने मार्मिक व्याख्यानों द्वारा अमृत बरसाया।

दिनांक 16 दिसम्बर को आध्यात्मिक कवि सम्मेलन का आयोजन किया गया। दिनांक 17 दिसम्बर को पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा की अध्यक्षता एवं पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल के मुख्यातिथ्य में एक विद्वत संगोष्ठी का आयोजन हुआ। **जैनदर्शन में आध्यात्मिक शिक्षा की उपयोगिता** विषय पर श्री अशोक बड़जात्या, डॉ. एम. पी. जैन (सहायक संचालक शिक्षा विभाग) भोपाल, पण्डित विराग शास्त्री के अतिरिक्त मुख्य वक्ता पण्डित अभयजी शास्त्री ने तर्कसंगत विचार प्रस्तुत किये। गोष्ठी का संचालन पण्डित राजकुमारजी शास्त्री बांसवाड़ा ने एवं आभार प्रदर्शन श्री विजयजी बड़जात्या ने किया।

दिनांक 18 दिसम्बर, 2005 को श्री मनोहरलालजी काला का सम्मान समारोह (अमृत महोत्सव) आयोजित किया गया; जिसकी अध्यक्षता श्री अशोक बड़जात्या ने की। अतिथियों में पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल के अतिरिक्त संहितासूरि पण्डित नाथूलालजी शास्त्री, पण्डित विमलचन्दजी झांझरी, पण्डित रमेशचन्दजी बांझल, पण्डित रमेशजी दाऊ जयपुर, श्री राजेन्द्रजी सेठी, श्री राजेन्द्रजी पहाड़िया, श्री देवकुमारसिंहजी कासलीवाल, श्री कैलाशजी चौधरी, पं. तेजकुमारजी गंगवाल मंचासीन थे। अतिथियों का स्वागत श्री विजय बड़जात्या ने तथा संचालन पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री ने किया।

इस अवसर पर श्री पदमजी पहाडिया ने कालाजी का परिचय दिया। साथ ही '**अध्यात्मरसिक श्री मनोहरलाल काला अभिनन्दन सारिणी-2005**' नामक पुस्तक का विमोचन किया गया। समारोह में इन्दौर के अतिरिक्त विभिन्न स्थानों से पधारे संगठन प्रतिनिधियों एवं प्रमुख व्यक्तियों द्वारा माल्यार्पण एवं शॉल भेंटकर कालाजी का स्वागत किया गया। आभार प्रदर्शन श्री सुशीलजी व राजेशजी काला ने किया। **ह्न अशोक बड़जात्या**

समयसार सप्ताह सी. डी. का विमोचन

श्रवणबेलगोला (कर्ना.) : वर्ष 2005 के अंतिम दिन 31 दिसम्बर को आचार्य श्री वर्धमानसागरजी महाराज द्वारा समयसार सप्ताह सी.डी. का सैट विमोचन किया गया। विमोचन के उपरान्त सी.डी. का सैट, भट्टारक स्वस्ति श्री चारुकीर्तिजी-जैनमठ, श्रवणबेलगोल को सी.डी. के निर्देशक श्री अखिल बंसल द्वारा भेंट की गई।

ज्ञातव्य रहे कि दिनांक 9 से 13 अक्टूबर तक सिद्धान्त चक्रवर्ती आचार्य श्री विद्यानन्दजी मुनिराज के सान्निध्य में कुन्दकुन्द भारती भवन दिल्ली में तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल द्वारा समयसार ग्रन्थ की महत्वपूर्ण गाथाओं का सारभूत विवेचन किया गया था, जिसके 13 प्रवचनों की 13 सी.डी. निर्मित की गई है। सी.डी. का सैट बिक्री के लिये 300 रुपये में उपलब्ध है।

पता- श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-4, बापूनगर, जयपुर-15

द्रव्य-गुण-पर्याय वर्ष का प्रारंभ

सनावद (म.प्र.) : छहढाला वर्ष की अपूर्व सफलता के पश्चात् अब सनावद से द्रव्य-गुण-पर्याय वर्ष का प्रारंभ हुआ है। यह आयोजन श्रीमती धर्मवती धर्मपत्नी जवरचंदजी पारमार्थिक ट्रस्ट द्वारा गोपालदासजी बरैया समिति के तत्त्वावधान में प्रारंभ किया गया है।

द्रव्य-गुण-पर्याय वर्ष में 10 विषय रखे गये हैं और प्रत्येक माह उन विषयों के आधार पर मात्र विकल्पात्मक प्रणाली से पेपर लिये जा रहे हैं।

अब तक इस द्रव्य-गुण-पर्याय वर्ष में सनावद, खण्डवा, शाहपुर, बुरहानपुर, मलकापुर, मण्डलेश्वर, महेश्वर, पंधाना, कसरावद, बैडिया, मुम्बई, औरंगाबाद तथा इन्दौर के विभिन्न उपनगरों से 825 परीक्षार्थी सम्मिलित हो चुके हैं। विद्वानों के अथक् प्रयास से सभी में तत्त्वज्ञान का मर्म समझने की अपूर्व ललक लगी है।

इस द्रव्य-गुण-पर्याय वर्ष के सम्पूर्ण कार्य **पण्डित जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद** के निर्देशन एवं **पण्डित रितेशकुमारजी शास्त्री सनावद** के संचालन में चल रहे हैं। इन्दौर में यह कार्य श्री रितेशजी जैन बैडिया एवं श्री मनीषजी टीकमगढ़ के संचालन में हो रहा है। कार्यक्रम 1 अक्टूबर, 2005 से प्रारंभ हो चुका है और 30 सितम्बर, 2006 तक सुचारु रूप से चलेगा।

श्रीमती अनामिका जैन को पीएच.डी. की उपाधि

जयपुर : जैन अनुशीलन केन्द्र की शोध छात्रा श्रीमती अनामिका जैन को दिनांक 10 दिसम्बर, 05 को राजस्थान विश्वविद्यालय द्वारा '**भट्टारक शुभचन्द्र : व्यक्तित्व एवं कृतित्व**' विषय पर पीएच.डी की उपाधि प्रदान की गई। डॉ.(श्रीमती) जैन ने यह शोध कार्य डॉ. पी.सी. जैन, निदेशक, जैन अनुशीलन केन्द्र, राज. विश्वविद्यालय के निर्देशन में किया है।

आपकी इस उपलब्धि के लिये वीतराग-विज्ञान परिवार की ओर से हार्दिक बधाई।

श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल कोटा के तत्त्वावधान एवं
श्री कुन्दकुन्द-कहान दि. जैन मुमुक्षु आश्रम ट्रस्ट कोटा के आयोजकत्व में

श्री आदिनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव

(शनिवार, 4 फरवरी से शुक्रवार, 10 फरवरी, 06 तक)

कार्यक्रम स्थल : अयोध्यापुरी, मल्टीपरपज स्कूल प्रांगण, गुमानपुरा, कोटा

अत्यंत आनंद एवं उल्लास के साथ आपको यह मंगल संदेश दे रहे हैं कि राजस्थान की औद्योगिक, शैक्षणिक एवं आध्यात्मिक नगरी कोटा में आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के धर्मप्रभावना योग एवं जैनदर्शन के तलस्पर्शी विद्वान बाबू जुगलकिशोरजी 'युगल' के मंगल आशीर्वाद से श्री कुन्दकुन्द कहान दि. जैन **मुमुक्षु आश्रम** में एक 71 फीट उतुंग शिखरयुक्त भव्य जिनमंदिर, 51 फीट ऊँचा विशाल मानस्तम्भ, मुनिसुव्रतनाथ टोंक तथा स्वाध्याय भवन का नवनिर्माण हुआ है; जिसका पंचकल्याणक महोत्सव दिनांक 4 से 10 फरवरी,06 तक होना निश्चित हुआ है।

इस लोकोत्तर महायज्ञ में आध्यात्मिक प्रवक्ता विद्वान बाबू जुगलकिशोरजी 'युगल' कोटा, अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त तार्किक विद्वान डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, डॉ. उत्तमचन्दजी सिवनी, पण्डित विमलचन्दजी झांझरी उज्जैन, पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल जयपुर, पण्डित वीरेन्द्रकुमारजी आगरा, बाल ब्र. अभिनन्दनकुमारजी खनियांधाना, ब्र. सुमतप्रकाशजी खनियांधाना, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, पण्डित राजेन्द्रकुमारजी जबलपुर, पण्डित प्रदीपकुमारजी झांझरी उज्जैन, पण्डित हेमचन्दजी 'हेम' देवलाली आदि अनेक विशिष्ट विद्वान पधार रहे हैं।

प्रतिष्ठाविधि के सम्पूर्ण कार्य बाल ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री, सनावद के प्रतिष्ठाचार्यत्व एवं निर्देशन में सम्पन्न होंगे।

इस मांगलिक अनुष्ठान में अध्यात्म की गंगा, भक्ति की यमुना व सिद्धान्त की सरस्वतीरूप त्रिवेणी में स्नान करके कर्मकलंक प्रक्षालन हेतु निजकल्याणार्थ सपरिवार, इष्टमित्रों सहित पधारकर धर्मलाभ लेकर लौकिक-पारलौकिक जीवन का निर्माण करें।

विनीत :

श्री आदिनाथ दिगम्बर जिनबिम्ब पंचकल्याणक महोत्सव समिति, कोटा

सम्पर्क सूत्र : रतनचन्द शास्त्री 0744-3097262, 9828063891, 9829605507